National Research Journal of Human Resource Management
Volume No: 12, Issue No: 1, Year: 2025 (January-June)
PP: 186-191
ISSN: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.25)
Journal Website www.nrjhrm.in

बिहार की राजनीति में दलित समुदाय की भागीदारी: चेतना, संघर्ष और सशक्तीकरण के आयाम

सरोज कुमार यादव

विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग,ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

सार

बिहार की राजनीति में दलित समुदाय की भागीदारी स्वतंत्रता-उत्तर लोकतांत्रिक प्रक्रिया, संवैधानिक अधिकार, आरक्षण, सामाजिक न्याय आंदोलन, भूमि-संघर्ष, पंचायत-व्यवस्था और चुनावी प्रतिनिधित्व के संयुक्त प्रभाव से विकसित हुई है। यह भागीदारी केवल मतदान या आरक्षित सीटों तक सीमित नहीं रही, बल्कि सामाजिक सम्मान, संसाधनों में हिस्सेदारी, स्थानीय सत्ता-संरचना में प्रवेश और दलित अस्मिता के सार्वजनिक विस्तार से भी जुड़ी रही है। बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण 2023 के अनुसार राज्य में अनुसूचित जातियों की हिस्सेदारी 19.65% है, जबकि बिहार विधानसभा में अनुसूचित जातियों के लिए 38 सीटें आरक्षित हैं, जो कुल 243 सीटों का 15.64% है। यह अंतर दलित प्रतिनिधित्व की संरचनात्मक सीमाओं की ओर संकेत करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र द्वितीयक आँकड़ों के आधार पर बिहार की राजनीति में दलित समुदाय की चेतना, संघर्ष और सशक्तीकरण के आयामों का विश्लेषण करता है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि बिहार में दलित राजनीति ने लोकतंत्र को सामाजिक आधार प्रदान किया है, किंतु वास्तविक सशक्तीकरण के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व को शिक्षा, भूमि-अधिकार, रोजगार, पंचायत-भागीदारी, दलित महिला नेतृत्व और प्रशासनिक पहुँच से जोड़ना आवश्यक है।

मुख्य शब्द: दलित राजनीति, बिहार, सामाजिक न्याय, दलित चेतना, प्रतिनिधित्व, सशक्तीकरण, चुनावी भागीदारी।

1. प्रस्तावना

बिहार की राजनीति को समझने के लिए जाति, वर्ग, भूमि और सामाजिक न्याय के अंतर्संबंध को समझना आवश्यक है। दलित समुदायों की राजनीतिक भागीदारी इसी ऐतिहासिक सामाजिक संरचना से उभरती है, जहाँ लंबे समय तक सामाजिक बहिष्कार, भूमिहीनता, श्रम-निर्भरता और राजनीतिक परिधीयता उनके जीवन की प्रमुख विशेषताएँ रही हैं। स्वतंत्रता के बाद संविधान ने समान नागरिकता, अस्पृश्यता-उन्मूलन, आरक्षण और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के माध्यम से दलित समुदायों को लोकतांत्रिक अधिकारों का आधार दिया [1]।

बिहार में दलित चेतना का विकास केवल विचारात्मक प्रक्रिया नहीं था; यह सामाजिक अपमान, आर्थिक शोषण, जातिगत हिंसा और राजनीतिक अदृश्यता के विरुद्ध संघर्ष से निर्मित हुआ। हितेंद्र के. पटेल ने बिहार में 1913 से 1952 तक दलित लामबंदी को जातीय संगठनों, सामाजिक सुधार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की आकांक्षा से जोड़ा है [2]। स्वतंत्रता के बाद यही चेतना कांग्रेस-व्यवस्था, समाजवादी राजनीति, वामपंथी किसान-मजदूर आंदोलनों, मंडल-उत्तर सामाजिक न्याय आंदोलन और समकालीन गठबंधन-राजनीति से होकर विस्तृत हुई [3]।

2. अध्ययन के उद्देश्य और पद्धति

इस शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य हैं—बिहार की राजनीति में दलित समुदाय की भागीदारी के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन करना; दलित चेतना और सामाजिक संघर्षों के राजनीतिक प्रभाव का विश्लेषण

© Copyright @ Authors

ISSN: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.25)
Journal Website www.nrjhrm.in

करना; चुनावी प्रतिनिधित्व और जनसंख्या के बीच संबंध को सांख्यिकीय रूप से समझना; तथा दलित सशक्तीकरण की उपलब्धियों और सीमाओं का समालोचनात्मक परीक्षण करना।

यह अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसमें जनगणना 2011, बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण 2023, भारत निर्वाचन आयोग, परिसीमन आदेश 2008, सामाजिक-आर्थिक जाति जनगणना, पंचायती राज अधिनियम और दलित राजनीति पर उपलब्ध विद्वत् साहित्य का उपयोग किया गया है। विश्लेषण के लिए प्रतिशत, प्रतिनिधित्व-अंतर, प्रतिनिधित्व-सूचकांक और तुलनात्मक पद्धति अपनाई गई है।

3. दलित चेतना का विकास

दलित चेतना का अर्थ केवल जातिगत पहचान का बोध नहीं है, बल्कि सामाजिक सम्मान, समान नागरिकता, अधिकार और आत्मसम्मान की राजनीति है। आंबेडकर ने जाति-व्यवस्था को सामाजिक लोकतंत्र के लिए गंभीर बाधा माना और समानता, स्वतंत्रता तथा बंधुत्व को लोकतांत्रिक समाज का आधार बताया [4]। बिहार के ग्रामीण समाज में यह विचार विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यहाँ जाति का संबंध केवल सामाजिक प्रतिष्ठा से नहीं, बल्कि श्रम-विभाजन, भूमि-स्वामित्व, गाँव की बसावट, संसाधन-प्राप्ति और राजनीतिक प्रभुत्व से भी रहा है।

स्वतंत्रता के बाद दलित चेतना का पहला रूप संवैधानिक अधिकारों और आरक्षण की समझ से जुड़ा था। दूसरा रूप ग्रामीण संघर्षों से विकसित हुआ, जहाँ दलित खेत-मजदूरों ने मजदूरी, भूमि, सम्मान और सुरक्षा की माँग की। तीसरा रूप चुनावी राजनीति से जुड़ा, जिसमें दलित समुदायों ने मतदान, प्रतिनिधित्व, गठबंधन और नेतृत्व के माध्यम से अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। बिहार की राजनीति में जगजीवन राम, रामविलास पासवान और जीतन राम मांझी जैसे नेताओं ने अलग-अलग ऐतिहासिक संदर्भों में दलित प्रतिनिधित्व को सार्वजनिक महत्व दिया [5]।

4. संघर्ष के प्रमुख आयाम

बिहार में दलित संघर्ष को तीन स्तरों पर समझा जा सकता है। पहला, सामाजिक संघर्ष, जिसमें जातिगत अपमान, भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार के विरुद्ध प्रतिरोध शामिल है। दूसरा, आर्थिक संघर्ष, जिसमें भूमि, मजदूरी, रोजगार, शिक्षा और सरकारी योजनाओं तक पहुँच का प्रश्न शामिल है। तीसरा, राजनीतिक संघर्ष, जिसमें चुनावी प्रतिनिधित्व, पंचायत-भागीदारी, आरक्षित सीटें और दलित नेतृत्व का प्रश्न प्रमुख है।

ग्रामीण बिहार में दलित समुदायों की बड़ी संख्या भूमिहीन या सीमांत श्रम-निर्भर रही है। इसलिए उनकी राजनीति केवल पहचान की राजनीति नहीं रही, बल्कि आजीविका, सुरक्षा और संसाधन-वितरण की राजनीति भी रही है। वामपंथी आंदोलनों, समाजवादी राजनीति और सामाजिक न्याय आंदोलन ने इस संघर्ष को अलग-अलग रूपों में दिशा दी। मंडल-उत्तर राजनीति ने दलित-पिछड़ा-अल्पसंख्यक गठबंधन की भाषा को मजबूत किया, परंतु दलितों की स्वतंत्र राजनीतिक आवाज कई बार व्यापक पिछड़ा राजनीति के भीतर सीमित भी हुई [6]।

5. जनसंख्या और प्रतिनिधित्व का सांख्यिकीय विश्लेषण

2011 की जनगणना में बिहार की कुल जनसंख्या 104,099,452 और अनुसूचित जाति जनसंख्या 16,567,325 दर्ज की गई थी, जो कुल जनसंख्या का 15.91% थी। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग के बिहार राज्य कार्यालय ने भी 2011 जनगणना के आधार पर यही आँकड़ा प्रस्तुत किया है। 2023 के बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण में अनुसूचित जातियों की संख्या 25,689,820 और हिस्सेदारी 19.65% बताई गई।

© Copyright @ Authors

ISSN: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.25)
Journal Website www.nrjhrm.in

तालिका 1: बिहार में अनुसूचित जाति जनसंख्या का तुलनात्मक स्वरूप

स्रोत	कुल जनसंख्या	अनुसूचित जाति जनसंख्या	प्रतिशत
जनगणना 2011	104,099,452	16,567,325	15.91%
जाति-आधारित सर्वेक्षण 2023	130,725,310	25,689,820	19.65%
अंतर	+26,625,858	+9,122,495	+3.74 प्रतिशतांक

यह तालिका स्पष्ट करती है कि बिहार में दलित समुदायों की संख्या-आधारित दावेदारी मजबूत हुई है। 2011 की तुलना में 2023 में अनुसूचित जाति हिस्सेदारी 3.74 प्रतिशतांक अधिक दिखाई देती है। इससे राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आरक्षण और संसाधन-वितरण की बहस को नया आधार मिलता है।

बिहार विधानसभा में कुल 243 सीटें हैं। परिसीमन व्यवस्था के बाद इनमें 38 सीटें अनुसूचित जातियों और 2 सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हैं। निर्वाचन-संबंधी अद्यतन विवरणों में भी बिहार की 243 विधानसभा सीटों में 38 अनुसूचित जाति और 2 अनुसूचित जनजाति आरक्षित सीटों का उल्लेख है।

तालिका 2: बिहार विधानसभा में अनुसूचित जाति प्रतिनिधित्व-सूचकांक

सूचक	आँकड़ा
कुल विधानसभा सीटें	243
अनुसूचित जाति आरक्षित सीटें	38
आरक्षित सीटों का प्रतिशत	15.64%
अनुसूचित जाति जनसंख्या, 2023	19.65%
प्रतिनिधित्व-अंतर	-4.01 प्रतिशतांक
प्रतिनिधित्व-सूचकांक	0.80

प्रतिनिधित्व-सूचकांक = 15.64 ÷ 19.65 = 0.80। इसका अर्थ है कि वर्तमान जनसंख्या हिस्सेदारी की तुलना में विधानसभाई आरक्षित प्रतिनिधित्व कम है। यह अंतर भविष्य में परिसीमन और सामाजिक प्रतिनिधित्व की बहस को प्रभावित कर सकता है।

6. चुनावी राजनीति में दलित भागीदारी

बिहार की चुनावी राजनीति में दलित समुदायों की भागीदारी बहुआयामी रही है। प्रारंभिक दशकों में दलित प्रतिनिधित्व कांग्रेस व्यवस्था के भीतर दिखाई देता था। जगजीवन राम जैसे नेता राष्ट्रीय स्तर पर दलित प्रतिनिधित्व के प्रतीक बने। 1970 और 1980 के दशक में दलित भागीदारी ग्रामीण संघर्षों, किसान-मजदूर आंदोलनों और जातिगत अन्याय के प्रतिरोध से जुड़ी। 1990 के बाद सामाजिक न्याय की राजनीति ने दलित समुदायों को सत्ता-समीकरण में अधिक स्पष्ट स्थान दिया [7]।

रामविलास पासवान ने दलित राजनीति को गठबंधन-राजनीति और केंद्रीय सत्ता से जोड़ा। उनकी राजनीति ने पासवान/दुसाध समुदाय के साथ व्यापक दलित दावेदारी को भी स्वर दिया। दूसरी ओर, जीतन राम मांझी के उदय ने महादलित और विशेष रूप से मुसहर समुदाय की राजनीतिक दृश्यता को बढ़ाया। समकालीन चुनावी राजनीति में दलित, महादलित, अति-पिछड़ा और महिला मतदाताओं को

© Copyright @ Authors

ISSN: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.25)
Journal Website www.nrjhrm.in

अलग-अलग सामाजिक समूहों के रूप में समझकर चुनावी रणनीतियाँ बनाई जाती हैं। हालिया चुनावी विश्लेषणों में भी बिहार में पिछड़ा, अति-पिछड़ा, अनुसूचित जाति और महादलित उम्मीदवारों को सामाजिक अभियांत्रिकी के केंद्र में रखा गया है।

7. सशक्तीकरण के सामाजिक-आर्थिक आयाम

दलित सशक्तीकरण का वास्तविक मूल्यांकन केवल राजनीतिक प्रतिनिधित्व से नहीं किया जा सकता। इसके लिए गरीबी, शिक्षा, रोजगार, भूमि और प्रशासनिक पहुँच को भी देखना आवश्यक है। बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण से संबंधित उपलब्ध विवरणों के अनुसार राज्य में 34.13% परिवार गरीब श्रेणी में थे, जबकि अनुसूचित जाति परिवारों में यह अनुपात 42.93% था। इसी स्रोत में अनुसूचित जातियों में सरकारी रोजगार 1.13% और स्नातक शिक्षा 3.12% बताई गई है।

तालिका 3: सामाजिक-आर्थिक असमानता का संकेतक विश्लेषण

सूचक	राज्य औसत	अनुसूचित जाति	अंतर	अनुपात
गरीब परिवार	34.13%	42.93%	+8.80	1.26
स्नातक शिक्षा	6.47%	3.12%	-3.35	0.48
सरकारी रोजगार	1.57%	1.13%	-0.44	0.72

बिहार में दलित समुदायों की राजनीतिक भागीदारी बढ़ने के बावजूद सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण अभी अधूरा है। अनुसूचित जातियों में गरीबी राज्य औसत से 26% अधिक है। स्नातक शिक्षा में उनकी स्थिति राज्य औसत की लगभग आधी है। सरकारी रोजगार में भी उनकी उपस्थिति कम है। इसलिए दलित राजनीति के अगले चरण को शिक्षा, कौशल, सरकारी सेवाओं, उद्यमिता और भूमि-सुधार से जोड़ना आवश्यक है।

8. पंचायत राजनीति और स्थानीय सशक्तीकरण

बिहार में पंचायत राजनीति ने दलित समुदायों को ग्राम-स्तर पर नई राजनीतिक दृश्यता दी है। पंचायत आरक्षण ने वार्ड सदस्य, मुखिया, पंचायत समिति सदस्य और जिला परिषद सदस्य जैसे पदों पर दलितों की भागीदारी को बढ़ाया। महिलाओं के लिए 50% आरक्षण ने दलित महिलाओं को भी स्थानीय लोकतंत्र में प्रवेश दिया। इससे दलित सशक्तीकरण का आधार केवल राज्य विधानसभा या लोकसभा तक सीमित नहीं रहा, बल्कि गाँव की सत्ता-संरचना तक पहुँचा [8]।

फिर भी पंचायत प्रतिनिधित्व की अपनी सीमाएँ हैं। कई स्थानों पर आर्थिक निर्भरता, स्थानीय प्रभुत्वशाली जातियों का दबाव, प्रशासनिक जानकारी की कमी और दस्तावेजी प्रक्रियाएँ दलित प्रतिनिधियों की प्रभावशीलता को सीमित करती हैं। दलित महिला प्रतिनिधियों के सामने जाति और लिंग दोनों स्तरों की चुनौतियाँ रहती हैं। इसके बावजूद पंचायत राजनीति ने दलित समुदायों में अधिकार, योजना, बजट, ग्रामसभा और सरकारी कार्यालयों तक पहुँच की नई समझ विकसित की है।

9. समालोचनात्मक विवेचना

बिहार की राजनीति में दलित समुदाय की भागीदारी को केवल सफलता-कथा के रूप में नहीं देखा जा सकता। यह सच है कि दलित समुदाय अब चुनावी राजनीति में अधिक दृश्यमान हैं। राजनीतिक दल टिकट-वितरण, गठबंधन और घोषणापत्र में दलित तथा महादलित समूहों को ध्यान में रखते हैं। आरक्षित सीटों, पंचायत आरक्षण और सामाजिक न्याय की भाषा ने दलितों की राजनीतिक उपस्थिति को मजबूत किया है।

© Copyright @ Authors

ISSN: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.25)
Journal Website www.nrjhrm.in

परंतु समस्या यह है कि प्रतिनिधित्व कई बार प्रतीकात्मक रह जाता है। दलित प्रतिनिधि दल-निष्ठा, गठबंधन दबाव और स्थानीय प्रभुत्व के कारण स्वतंत्र दलित एजेंडा विकसित नहीं कर पाते। उपजातीय विभाजन भी दलित राजनीति की सामूहिक शक्ति को सीमित करता है। पासवान/दुसाध, रविदास/चमार, मुसहर, पासी और अन्य दलित समूहों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति समान नहीं है। इसलिए दलित सशक्तीकरण की नीति में सबसे वंचित दलित समुदायों को केंद्र में रखना आवश्यक है।

10. निष्कर्ष

बिहार की राजनीति में दलित समुदाय की भागीदारी चेतना, संघर्ष और सशक्तीकरण की लंबी प्रक्रिया का परिणाम है। दलित चेतना ने सामाजिक अपमान के विरुद्ध सम्मान और अधिकार की भाषा दी। सामाजिक संघर्षों ने भूमि, मजदूरी, सुरक्षा और समानता के प्रश्नों को राजनीतिक बनाया। चुनावी लोकतंत्र और आरक्षण ने दलित समुदायों को विधानमंडल, पंचायत और राजनीतिक दलों में प्रवेश दिया।

फिर भी सांख्यिकीय विश्लेषण स्पष्ट करता है कि बिहार में दलित सशक्तीकरण अभी अधूरा है। अनुसूचित जातियों की जनसंख्या हिस्सेदारी 19.65% है, जबकि विधानसभाई आरक्षित सीटों का अनुपात 15.64% है। गरीबी, उच्च शिक्षा और सरकारी रोजगार में भी दलित समुदाय राज्य औसत से पीछे है। इसलिए बिहार की दलित राजनीति को अब केवल प्रतिनिधित्व की राजनीति से आगे बढ़कर परिणामकारी सामाजिक न्याय की दिशा में जाना होगा। इसके लिए शिक्षा, भूमि-सुधार, रोजगार, पंचायत-प्रशिक्षण, दलित महिला नेतृत्व, युवा नेतृत्व और प्रशासनिक पहुँच को केंद्रीय नीति-अजेंडा बनाना आवश्यक है।

संदर्भ

1. भारत सरकार, भारत का संविधान. नई दिल्ली: विधि और न्याय मंत्रालय, अद्यतन संस्करण।
2. एच. के. पटेल, "एस्पेक्ट्स ऑफ मोबिलाइजेशन्स ऑफ दलित्स इन बिहार, 1913–1952," कंटेम्पररी वॉइस ऑफ दलित, खंड 9, अंक 1, पृ. 63–72, 2017।
3. आर. कोठारी, कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स. नई दिल्ली: ओरिएंट लॉन्गमैन, 1970।
4. बी. आर. आंबेडकर, जाति का विनाश. नई दिल्ली: नवयान, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2014।
5. सी. जेफ्रेलो, इंडियाज साइलेंट रिवोल्यूशन: द राइज ऑफ द लोअर कास्ट्स इन नॉर्थ इंडिया. न्यूयॉर्क: कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 2003।
6. एस. पाई, दलित असर्शन एंड द अनफिनिश्ड डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स, 2002।
7. जे. विटसो, डेमोक्रेसी अगेंस्ट डेवलपमेंट: लोअर-कास्ट पॉलिटिक्स एंड पॉलिटिकल मॉडर्निटी इन पोस्टकोलोनियल इंडिया. शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 2013।
8. बिहार सरकार, बिहार पंचायती राज अधिनियम, 2006. पटना: पंचायती राज विभाग, 2006।
9. बिहार सरकार, बिहार जाति-आधारित सर्वेक्षण, 2023: जनसंख्या एवं सामाजिक-आर्थिक निष्कर्ष. पटना: सामान्य प्रशासन विभाग, 2023।
10. भारत सरकार, जनगणना 2011: अनुसूचित जाति जनसंख्या, बिहार. नई दिल्ली: जनगणना आयुक्त कार्यालय, 2011।
11. भारत निर्वाचन आयोग, डिलिमिटेशन ऑफ पार्लियामेंटरी एंड असेंबली कॉन्स्टिट्यूएंसीज ऑर्डर, 2008. नई दिल्ली, 2008।

© Copyright @ Authors

ISSN: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal (IF: 7.25)
Journal Website www.nrjhrm.in

12. भारत निर्वाचन आयोग, बिहार विधानसभा निर्वाचन सांख्यिकीय प्रतिवेदन. नई दिल्ली, विभिन्न वर्ष।
13. जी. ओमवेट, दलित्स एंड द डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स, 1994।
14. एम. एन. श्रीनिवास, कास्ट इन मॉडर्न इंडिया एंड अदर एसेज. बॉम्बे: एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1962।
15. ए. बेटेय, कास्ट, क्लास एंड पावर: चेंजिंग पैटर्न्स ऑफ स्ट्रैटिफिकेशन इन अ तंजौर विलेज. बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, 1965।
16. ए. सिन्हा, द रीजनल रूट्स ऑफ डेवलपमेंटल पॉलिटिक्स इन इंडिया: अ डिवाइडेड लेवायथन. ब्लूमिंगटन: इंडियाना यूनिवर्सिटी प्रेस, 2005।

© Copyright @ Authors